Abstract

''श्री अरविन्द' और 'दिनकर' कृत उर्वशी :

एक तुलनात्मक अध्ययन''

: प्रस्तुत कर्ता :

डॉ. राजेश जे. रावल

IUC associate

Indian institute of advance studies shimla

May-2011

"श्री अरविन्द' और 'दिनकर' कृत उर्वशी :

एक तुलनात्मक अध्ययन"

डॉ. राजेश जे. रावल

हिन्दी विभाग,

एम. जे. कुंडलिया महिला

कॉलेज, राष्ट्रीयशाला

राजकोट.

२१वीं सदी का आगमन हो चुका है । आज समग्र विश्व भौतिक दृष्टि से विकास कर रहा है, आज मस्तिष्क का चरम विकास हो रहा है, और हृदय से मानव अत्यंत दुःखी है । 'प्रेम' के नाम पर उसे केवल कुण्ठा और संत्रास ही मिल रहा है ।

भारत वर्ष का साहित्य सदियों से 'प्रेम' के उन्मुक्त और उदात्त स्वरूप को महत्त्वपूर्ण मानकर उसका चित्रण कर रहा है । 'प्रेम' के महान गुण का गान करनेवाली ऐसी ही सुंदर कृति का नाम है 'उर्वशी' । 'उर्वशी' का कथानक ही इतना आकर्षक है कि भिन्न–भिन्न समय में अनेक कवियोंने इस पर काव्य श्रृजन किया है ।

यहाँ पर 'श्री अरविन्द' द्वारा अंग्रेजी में रचित 'उर्वशी' और 'श्री रामधारीसिंह दिनकर' द्वारा हिन्दी में रचित 'उर्वशी' काव्य का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है ।

१. 'पुरूरवा–उर्वशी' की यह गाथा 'ब्राह्मण ग्रंथ', ऋग्वेद, विष्णुपुराण आदि में पायी जाती है ।

२. 'उर्वशी' शब्द का कोषगत अर्थ होता है – उत्कट अभिलाषा, अपरिमितवासना, ईच्छा अथवा कामना ।

३. 'पुरूरवा' का कोषगत अर्थ होता है – वह व्यक्ति जो नाना प्रकार के 'रव' करें, नाना ध्वनियों से आक्रान्त हों ।

४. 'उर्वशी' – चक्षु, रसना, घ्राण और कामनाओं की प्रतीक है ।

५. 'पुरूरवा' – रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द से मिलनेवाले सुख़ से उद्वेलित मनुष्य का प्रतीक है ।

६. 'श्री अरविन्द' ने '४' सर्गो में और 'दिनकरजी' ने '५' अंको में इस काव्य की रचना की है ।

७. 'श्री अरविन्द' ने 'राजा पुरूरवा' को मानव से ऊपर ऊठाकर देवत्व के तेज से आभूषित किया है । 'दिनकर'ने 'राजा पुरूरवा' को द्विधाग्रस्त प्रेमासक्त और पराक्रमी राजा के रूप में चित्रित किया है ।

८. 'श्री अरविन्द'ने इस काव्य में 'उर्वशी' को प्रकृति के साक्षात स्वरूप के रूप में और 'प्रेम' की औदार्य मूर्ति के रूप में चित्रित किया है । और 'दिनकर' ने उसे वासना से सराबर, प्रगल्भ प्रेमिका के रूप में चित्रित किया है ।

निष्कर्ष :

प्रस्तुत प्रपत्र में दोनों महाकवियोंकी कृति 'उर्वशी' का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है और इस अध्ययन से 'प्रेम' के उत्कट और औदार्यरूप को प्रस्थापित करके आधुनिक मानव की 'काम' विषयक समस्या का उचित और संस्कृति–सम्मत निराकरण प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है ।

''श्री अरविन्द' और 'दिनकर' कृत उर्वशी :

एक तुलनात्मक अध्ययन''

: प्रस्तुत कर्ता :

डॉ. राजेश जे. रावल

IUC associate

Indian institute of advance studies shimla

May-2011

''श्री अरविन्द' और 'दिनकर' कृत उर्वशी :

एक तुलनात्मक अध्ययन''

डॉ. राजेश जे. रावल

हिन्दी विभाग,

एम. जे. कुंडलिया महिला

कॉलेज, राष्ट्रीयशाला

राजकोट.

२१वीं सदी का आगमन हो चुका है । आज समग्र विश्व भौतिक दृष्टि से विकास कर रहा है, आज मस्तिष्क का चरम विकास हो रहा है, और हृदय से मानव अत्यंत दु:खी है । 'प्रेम' के नाम पर उसे केवल कुण्ठा और संत्रास ही मिल रहा है ।

भारत वर्ष का साहित्य सदियों से 'प्रेम' के उन्मुक्त और उदात्त स्वरूप को महत्त्वपूर्ण मानकर उसका चित्रण कर रहा है । 'प्रेम' के महान गुण का गान करनेवाली ऐसी ही सुंदर कृति का नाम है 'उर्वशी' । 'उर्वशी' का कथानक ही इतना आकर्षक है कि भिन्न-भिन्न समय में अनेक कवियोंने इस पर काव्य सृजन किया है ।

यहाँ पर 'श्री अरविन्द' द्वारा अंग्रेजी में रचित 'उर्वशी' और 'श्री रामधारीसिंह दिनकर' द्वारा हिन्दी में रचित 'उर्वशी' काव्य का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है ।

श्री अरविन्दकृत 'उर्वशी' :

'श्री अरविन्द' ने सन् १८९५ में 'उर्वशी' काव्य लिख़ा, और सन् १८९६ में व्यक्तिगत वितरण के लिए प्रकाशित किया । लेकिन इसके बाद चार दशकों तक स्वयं कवि के द्वारा अमान्य और अवहेलित, कहीं पर पड़ी रही, फिर 'श्री अरविन्द' ने इस काव्य पर पुनर्विचार करते हुए, 'कलेक्टेड पोयम्स' के १९४२ में प्रकाशित प्रथम संस्करण में इसे सम्मिलित किया ।

'उर्वशी' के बारे में स्वयं 'श्री अरविन्द' ने लिख़ा है – नारायण से उत्पन्न उर्वशी धूप की दीप्ति उषा की अरूणिमा, समुद्र का बहुविध हास, आकाशों की भव्यता और विद्युत की चमक है । संक्षेप में जो कुछ भी ज्योतिर्मय है, सुदूर है, अग्राह्य है और इस विश्व में सम्मोहक तथा आकर्षक है, वह भी जो अद्‌भुत है, मधुर है, मानवीय सौन्दर्य तथा मानवीय जीवन में मादक है, मानवीय आवेग और भावावेश का आनन्द; वह सब जो कला, कविता, ज्ञान और चिंतन में आविष्ट और अधिकृत करता है, और अपहरण कर ले जाता है, इस एक नाम के साथ संयुक्त है । (दि हार्मनी ऑफ़ वरच्यू पृ.२७८–२७९)

'उर्वशी' काव्य लिख़ने की प्रेरणा 'श्री अरविन्द' को 'कालिदास' के 'विक्रमोर्वशी' नाटक का अंग्रेजी रूपांतर करते समय हुई । इसके बाद कविने इस विषय पर अनेक आलेख भी लिखे । इस काव्य को लिखने से पहले कवि ने 'उर्वशी' शीर्षक से ही एक कविता–अंश भी लिखा था ।

'श्री अरविन्द' ने 'उर्वशी' काव्य चार सर्गो में लिख़ा है । कविता का प्रारंभ दानव संग्राम समाप्त होने के 'बाद पुरूरवा' की वापसी से होता है । वह भूलोक की ओर आता है – पृथ्वी और स्वर्ग के बीच एक नक्षत्र के समान दैदीप्यमान । उषा की प्रथम किरण के साथ वह पर्वत पर आता है, और प्रकृति के पावनरूप से मुग्ध हो जाता है । युद्ध के आक्रन्द के बाद प्रकृति की यह अविराम शोभा उसे माता के वक्ष की भाँति मधुर प्रतीत होती है ।

इस प्रकृति वर्णन में 'श्री अरविन्द' के भीतर का युवाकवि सुंदर वर्णन करता है । जो पश्चिम के साहित्यका अध्ययन करके लौटा है । यहाँ पर कवि का वर्णन देववाणी के समान प्राचीन भी है, और ग्रीक पौराणिक, काव्य का छायाभास भी दिख़ाई देता है । कविने 'पुरूरवा' को 'महाप्रकृति' का दर्शन विराट, शांतभाव मुद्राओं के द्वारा कराया है । धवल शिखर, वनपंक्तियाँ, श्वेतपक्षी, नदियों, निनादपूर्ण–निर्झरों को देख़ते – देख़ते, 'राजापुरूरवा' अपने भीतर में कहीं गहराई में उतरने लगता है ।

इसके बाद कविने 'इला' की नगरी का वर्णन किया है, और इस वर्णन के बाद अप्सराओं को उनके स्वर्गिक सौंदय की अतिशयता के साथ चित्रित किया है । अप्सराओं की अनेक ऐसी भंगिमाएँ है, जो 'महाप्रकृति' के नर्तन जैसी ही है । महाप्रकृति की विविधता की तरह ही इन अप्सराओं की भी विविधता, विशेषता है । 'मेनका' में वाक्‌पटुता और प्रवणता है । 'तिलोत्तमा' में भाव–गाम्भीर्य और भविष्यदर्शन की गहनता है । लेकिन 'उर्वशी' इन सभी महान गुणों का सायुज्य पूँज है ।

'तिलोत्तमा', 'पुरूरवा' को 'उर्वशी' को सौंपते हुए मार्मिक बात कहती है –

''किंतु हे इला पुत्र, एक मानव है और दूसरी

स्वर्ग की अप्सराएँ, सागर – सुताएँ,

अस्तित्व में असीम, समुद्र–सदृश ।

वे किसी एक का स्वामित्व स्वीकार नहीं करतीं,

न तो किसी एक आनन में

जगत को सीमित करती हैं,

बल्कि मधुर बात के सदृश,

असंयमित जल और सुन्दर सामान्य प्रकाश के समान

असंयमित समर्पण में पवित्र बनी रहती हैं ।''

'उर्वशी' में कवि, सौंदर्य की दिव्य अप्रतिमता के साथ प्रेम की अत्यान्तरिक मुग्धता और माधुर्य तथा संपूर्ण दृश्य–जगत् की शोभाश्री का दर्शन करते हैं । कविने लिखा –

''पार्थिवता की समस्त सुन्दरता है''

और आगे लिखा है –

''आत्मा की अतिसमृद्ध समग्रानुभूति ।''

इस 'आत्मा' की समृद्ध सुंदरता के कारण ही 'राजा पुरूरवा' के हृदय में स्पंदन जागृत होता है । 'उर्वशी' के दिव्यता से भरे प्रेम का वह कायल हो जाता है । 'प्रेम' के इस अगाध सागर में डूबते हुए वह कहता है –

''जो कि वह स्वयं थी, आनन्द और प्रेम ।''

इसी दिव्यप्रेम की गहन अनुभूति के बाद वह अपने कार्य में, अपने शासन में सर्वश्रेष्ठता प्राप्त करता है :

''सर्वत्र वह पुरूरवा है,

आर्यत्व की राजोचित महिमा में विद्यमान

प्रेम की उत्तुंग विराटता में एकाकी ।''

यहाँ पर वर्णन करते हुए कविने 'पुरूरवा' के व्यक्तित्व के दो ध्रुवों के बीच संतुलन का कोई प्रयास नहीं किया है । इसी अंतर्द्वन्द्व से 'पुरूरवा' आगे निकलता है और प्रकृति के इस महाखेल को खेलता हुआ महामानव बनने के पथ पर अग्रसर हो जाता है । 'श्री अरविन्द' ने 'पुरूरवा' के प्रेमान्धरूप का वर्णन भी किया है, और साथ ही साथ उसके 'महामानव्य' का गुणगान भी किया है ।

'उर्वशी' के प्रति अनुरक्त 'पुरूरवा' यह जानता है कि वह लोकधर्म, राजधर्म, पितृधर्म, और 'आत्मा' की सर्वोत्कृष्ट ऊँचाइयों का त्याग कर रहा है ।

अपनी महान कामना 'उर्वशी' की ख़ोज में पुरूरवा विराट दुर्गमताओं का सामना करता हुआ आगे निकल जाता है ।

'तुम श्रेष्ठ थे, और देवताओं के आकाश – पथ

अनुमत थे तुम्हारे पगों के लिए ....

और तू हे ऐलीय पुरूरवा,

दुःख़ावेग में छोड़ आया है अपने श्रमसाध्य गौरव को,

एक राष्ट्र की नियति को...

पर क्योंकि तेरा प्रेम एकाकी ही महान् है,

निःसंशय तुझे प्राप्त होगी तेरी संपूर्ण कामना ।'

इस अवस्था के बाद वह प्रेम के रंग में रंगकर, अनेक दुर्बलताओं को छोडकर श्रेष्ठप्रेमी के रूप में 'उर्वशी' के प्रेम को पाकर धन्य धन्य हो जाता है । अपनी अकेलेपन की दुःख़द बेला में भी वह ओज और पराक्रम से भरा हुआ, सभी कार्य संभालता हुआ, अंत में उसको पाने के लिए, केवल उसके प्रेमपियूष को पीने के लिए सब कुछ छोड़कर वह एकाकी ही निकल जाता है । 'श्री अरविन्द' ने 'प्रेम' की पावन पवित्र धारा में निमग्न इस कृति के समापन में केवल तीन पंक्तियों के द्वारा इस प्रेमाख्यान की पूर्णाहूति इस प्रकार की है –

''तब' प्रेम का देवता' अपने सुभग स्वर्ग में तृप्त हुआ ।

किंतु बहुत नीचे मौन महा अवकाश में

संघर्षशीला श्यामला धरा परित्यकत धूमती रही ।'

उपरोक्त पंक्तियों के साथ ही, 'श्री अरविन्द' ने इस काव्य की पूर्णाहूति की है । अंत में उन्होंने यही कहना चाहा है कि 'मानव' अपने महत् उदेश्य की पूर्ति के लिए आगे बढ़कर 'महामानव' और उससे भी आगे देवत्व की ओर अग्रसर हो सकता है ।

श्री दिनकर कृत 'उर्वशी' :

''श्री रामधारीसिंह दिनकर'' आधुनिक हिन्दी काव्यधारा के एक प्रमुख हस्ताक्षर हैं । उन्होनें पाँच अंको के माध्यम से 'उर्वशी' नाम का गीति – नाट्य की रचना की है । स्वयं 'दिनकरजी' ने स्वीकार किया है कि लगातार आठ वर्ष तक इस काव्य का चिंतन मेरे दिमाग में चलता रहा, और इसी चिंतन ने सन् १९५९ में 'उर्वशी' की रचना करवाई । यह काव्य सन् १९६१ में प्रकाशित हुआ ।

इस काव्य में 'पुरूरवा' की वेदना को मानव–जाति की चिरन्तन वेदना के प्रतीक के रूप में कविने प्रस्तुत किया है । कविने स्वयं इस वेदना की अनुभूति की है । इसकी भूमिका में स्वयं कविने स्वीकार किया है – 'कविता की भूमि केवल दर्द को जानती है, केवल बेचैनी को जानती है, केवल वासना की लहर और रूधिर के उत्ताप को पहचानती है।'

उपरोक्त तर्क की पुष्टि के लिए कविने काव्य की भूमिका से पहले, ऋग्वेद, मनुस्मृति, शिवपुराण, पद्मपुराण और महाभारत के अवतरणों को देकर यह सिद्ध किया है कि 'मानव' के रक्त की ऊष्णधारा में 'काम' निरंतर प्रवाहमान रहता है । इसकी योग्य तृप्ति में ही मानव का कल्याण समाया हुआ है ।

'दिनकरजी' को 'उर्वशी' गीति–नाट्य लिखने की प्रेरणा अन्य स्थान के अलावा कालिदास से भी मिली है । स्वयं ऊन्होंने स्वीकार किया है कि मेरा ध्येय वैदिक आख्यान की पुनरावृति का नहीं है, मेरी दृष्टि में 'पुरूरवा' सनातन नर का प्रतीक है, और 'उर्वशी' सनातन नारी का ।

इस गीति–नाट्य का नायक 'पुरूरवा' निरंतर द्वन्द्व में रहता है, क्योंकि द्वन्द्व में रहना मनुष्य का स्वभाव है । मनुष्य सुख की कामना भी करता है, और उससे आगे निकलने का प्रयास भी । इसी छटपटाहट का मार्मिक निरूपण यहाँ पर हुआ है । इसी 'प्रेम' को पाने की उत्कट लालशा नर–नारी में निरंतर रहती है । लेकिन फिरभी अंत में कुछ अनछूआ रह जाता है । यहीं से 'दिनकरजी' ने मार्ग

निकालने का प्रयत्न किया है । इसका रास्ता निकालते हुए वे इन्द्रियों के मार्ग से अतीन्द्रिय धरातल के स्पर्श के द्वारा प्रेम की अध्यात्मिक डगर को खोज़ते हैं । देह की सीमा से आगे बढने का एक मार्ग 'योगमार्ग' भी है, परंतु इसकी दूसरी राह नर–नारी के प्रेम के भीतर से भी निकलती है । यही अनुमान के आधार पर कवि इस रचनामें आगे बढ़ते हुए नज़र आते हैं ।

कविने 'उर्वशी' को सर्वद्वन्द्व से मुक्त चित्रित किया है । वह 'प्रेम' में अपने आप को संपूर्ण समर्पित कर देना जानती है । 'पुरूरवा' के भीतर 'देवत्व' की प्यास है । जबकि 'उर्वशी', 'देवलोक' से आयी है, इसलिए वह सहज निश्चिंत भाव से पृथ्वी के सुख को भोगती रहती है । कविने इसके 'पंचमअंक' में राजा 'पुरूरवा' को 'संन्यास' ग्रहण करते हुए चित्रित किया है । उसके सामने एक ओर देवत्व की कल्पना है, तो दूसरी ओर रक्त की उष्णधारा की पूकार । इसी आधार पर 'उर्वशी' 'राजा पुरूरवा' से प्रश्न करती है कि –

क्या ईश्वर और प्रकृति दो हैं ?

क्या दोनों एक साथ नहीं चल सकते ?

क्या प्रकृति ईश्वर का शत्रु बनकर उत्पन्न हुई है ?

इन्हीं सवालों के जवाब में कविने परमेश्वर और प्रकृति के एकत्व और संन्यास और 'प्रेम' के बीच संतुलन को प्रस्तुत करते हुए 'महर्षि च्यवन' के चरित्र को प्रस्तुत किया है । जिस 'वासना' की दुर्दम प्यास से 'पुरूरवा' अत्यंत व्याकुल है, वही प्रेमकी धारा शांतशितल बनकर, सुस्थिर और मौन रूप में 'महर्षि च्यवन' के भीतर से गुजरती है ।

इस कथा में कविने ज्यादा हल ढूँढने का यत्न भी नहीं किया है । स्वयं 'दिनकरजी' ने स्वीकार किया है कि समस्या का हल 'नेता' ख़ोजतें है कवि तो केवल उस दर्द और बेचैनी को जानता है केवल वासना की तीव्रता को व्यकत करता है ।

''रक्त बुद्धि से अधिक बली है और अधिक ज्ञानी भी,

क्योंकि बुद्धि सोचती और शोणित अनुभव करता है ।''

'पुरूरवा' इस अनुभव से सबकुछ जानता है । इस सच्चाई को बराबर अनुभव भी करता है । लेकिन द्वन्द्वग्रस्त रहता है ।

'उर्वशी' स्पष्टता के साथ निष्काम भावसे इसका भोग करती आगे बढ़ जाती है ।

''यह अकाम आनन्द भाग उनका, जो नहीं सुखों को,

आमन्त्रण भेजते, न जगकर पथ जोहा करते हैं ।''

वह सर्व कारण से रहित होकर उस 'प्रेम' की अगाध धारा में बहती है । आनंद प्राप्त करती है ।

संक्षेप में 'दिनकरजी' ने 'उर्वशी' और 'पुरूरवा' के मिथक का आधार ग्रहण करते हुए 'काम' और 'अध्यात्म' को काव्यात्मक अभिव्यक्ति दी है । इस गीति–नाट्य में कविने नवीन प्रयोग करते हुए समस्या को उभारा है, द्वन्द्व को अभिव्यक्त किया है । यही कवि की महत् उपलब्धि है ।

तुलनात्मक अध्ययन :

१. 'श्री अरविन्द' ने 'उर्वशी' काव्य की रचना अंग्रेजी में की है जबकि 'दिनकरजी'ने इस काव्य की रचना हिन्दी में की है ।

२. 'श्री अरविन्द' ने 'उर्वशी' काव्य की प्रेरणा संस्कृत साहित्य के ऋग्वेद, मनुस्मृति, शिवपुराण, पद्मपुराण और महाभारत से ली है । जब कि 'दीनकरजी' ने भी इन्हीं ग्रंथो का आधार लिया है ।

३. 'श्री अरविन्द' ने 'उर्वशी' काव्य की प्रेरणा 'कालिदास' कृत 'विक्रमोर्वशी' नाटक से ली है, जब कि 'दिनकरजी' ने भी 'कालिदास' से ही महत् प्रेरणा ग्रहण की है ।

४. 'श्री अरविन्द' ने 'उर्वशी' की रचना प्रबन्ध काव्य के रूप में की है, जब की 'दिनकरजी' ने 'उर्वशी' को 'गीति–नाट्य' के रूपमें प्रस्तुत किया है ।

५. 'श्री अरविन्द' ने 'उर्वशी' की रचना १८९५ में की, और इसका विधिवत्त प्रकाशन १९४२ में हुआ । जब कि 'दिनकरजी'ने इस 'गीति–नाट्य' की रचना १९५९ में की और इसका प्रकाशन १९६१ में हुआ ।

६. 'श्री अरविन्द' ने 'उर्वशी' लिख़ने के बाद '४७' वर्ष के बाद इसका प्रकाशन करवाया, जब कि 'दिनकरजी' लगातार '८' वर्षोतक इस विषय पर चिंतन करते रहे और बादमें इसको लिख़कर दो '२' वर्ष के बाद 'उर्वशी' का प्रकाशन करवाया ।

७. 'श्री अरविन्द' कृत 'उर्वशी' प्रबन्ध में चार सर्ग है, जब कि दिनकर कृत 'उर्वशी' 'गीति–नाट्य' में पाँच अंक है ।

८. 'श्री अरविन्द' ने 'उर्वशी' की कथा को केवल 'पुरूरवा उर्वशी' मिलन तक ही सीमित रखा है । जब कि 'दिनकरजी' ने 'उर्वशी' की कथा को विस्तार दिया है ।

९. 'श्री अरविन्द' के काव्य में कुछ अप्सराओं को छोड़ 'उर्वशी', 'पुरूरवा' के सिवा और किसी चरित्र का चित्रण नहीं हुआ है । जबकि दिनकरजी की 'उर्वशी' में 'उर्वशी' 'पुरूरवा' के अलावा 'पुरूरवा' की पत्नी 'औशीनरी' महर्षि च्यवन, सुकन्या ,'उर्वशी का पुत्र 'आयु' तथा और भी अन्य चरित्रों का चित्रण देखने को मिलता है ।

१०. 'श्री अरविन्द' ने 'उर्वशी' काव्य के प्रथमसर्ग में तथा अन्य सभी सर्गो में 'प्रकृति' का उत्तम चित्रण किया है जबकि 'दिनकरजी' ने अपने 'गीतिनाट्य' में केवल तीसरे अंक में ही प्रकृति चित्रण का आश्रय लिए है ।

११. 'श्री अरविन्द' के 'उर्वशी' काव्य में पाँच से छः चरित्रों का उल्लेख है, जबकि 'दिनकरजी' के 'उर्वशी' काव्य में बीस से ईक्कीस चरित्रों का उल्लेख देखने को मिलता है ।

१२. 'श्री अरविन्द' ने 'राजा पुरूरवा' को मानवता मानव से ऊपर ऊठाकर देवत्व के तेज से विभूषित किया है । 'दिनकर' ने 'राजा पुरूरवा' को द्विधाग्रस्त, प्रेमासक्त और पराक्रमी राजा के रूप में चित्रित किया है ।

१३. 'श्री अरविन्द' ने इस काव्य में 'उर्वशी' को प्रकृति के साक्षात स्वरूप के रूप में और प्रेम की औदार्य मूर्ति के रूप में चित्रित किया है । और 'दिनकर' ने 'उर्वशी' को काम से सराबोर, प्रगल्भ प्रेमिका के रूप में चित्रित किया है ।

१४. 'श्री अरविन्द' ने 'पुरूरवा' को आर्यत्व से भरा हुआ, श्रेष्ठ राजा, और 'एकांकी प्रेमी' के रूपमें चित्रित किया है, जब कि 'दिनकरजी' ने पुरूरवा को द्विधाग्रस्त, समग्र मानव जाति की चिरंतन वेदना से ग्रस्त प्रेमी के रूप में चित्रित किया है ।

१५. 'श्री अरविन्द' ने प्रेम के माध्यम से 'पुरूरवा' को महान प्रेमी के रूप में प्रस्थापित करके उसे देवत्व की ओर अग्रसर किया है । जब की दिनकरने 'पुरूरवा' को सन्यांस ग्रहण करवा के प्रश्नार्थ को ही सामने रखा है ।

१६. 'श्री अरविन्द' ने 'उर्वशी' काव्य में वर्णनात्मकता का ज्यादा आधार लिया है, जब कि 'दिनकर'ने सवांदकला का ज्यादा आधार लिया है ।

१७. 'श्री अरविन्द' ने मनोभावों और मनोव्यापार का वर्णन प्रकृति के माध्यम से व्यक्त किया है, जब कि दिनकर ने मनोभावों और मनोव्यापार का वर्णन संवाद के माध्यम से व्यक्त किया है ।

अंतत:

दोनों महाकवियों की उत्कृष्ट काव्य-कृति 'उर्वशी' के तुलनात्मक अध्ययन से निष्कर्ष रूप में हम कह सकते है कि 'उर्वशी' के माध्यम से आधुनिक युग का मानव अपने जीवन को 'प्रेम' की औषधी के द्वारा संतुलित एवं सुखी बना सकता है । २१ वीं सदी में आज पश्चिमी दुनिया की तर्ज पर ही इन्द्रीयों के अत्याचार से भरा हुआ 'वासनांध प्रेम' देखने को मिलता है जो भारत के समाज जीवन के लिए खतरा बना हुआ है ।

'श्री अरविन्द' ने 'उर्वशी' काव्य के द्वारा 'पुरूरवा-उर्वशी' के प्रेम का सुंदर रूप प्रस्तुत किया है, जिसमें कहीं पर भी छिछोरापन या प्रेम के निकृष्टतम रूप को स्थान नहीं दिया है । कविने 'प्रेमी पुरूरवा' के लिए लिखा है -

''तेरे वंशानुक्रम में परम 'चैतन्य तत्व',

एक मानव आकृति में अस्तित्व की मर्यादा स्वीकार करेगा,

तेरे वंश का आत्मज और स्तोता,

स्वर्णिम छन्द का विराट् विशद् कवि,

जिसका गीत इस विश्व की तरह व्यापक और विशाल होगा ।''

इस काव्य में 'पुरूरवा', 'परम प्रेम' के माध्यम से ही महान से महानतम् बनता है, और देवता के समकक्ष जीवन की सभी ऊँचाईयों को प्राप्त करता है ।

'दिनकरजी' ने 'उर्वशी' के माध्यम से रक्त की धारामें ऊष्णता से बहते प्रेम के रसायण पर चिंतन प्रस्तुत करते हुए, मानव जीवन में प्रेम के सर्वोपरी स्थान को स्वीकार किया है । 'उर्वशी' के पवित्र प्रेम के द्वारा 'राजा पुरूरवा' का कल्याण दिखाया गया है ।

''एक मूर्ति में सिमट गयीं किस भाँति सिद्धियाँ सारी ?

कब था ज्ञात मुझे, इतनी सुन्दर होती है नारी ?''

'उर्वशी' के माध्यम से 'दिनकर'ने नारी विषयक कोमल और उदात्त भावना को वाणी दी है ।'पुरूरवा' के लिए 'उर्वशी' भोग्य गठित हिम–शिला है, तो वह असीम पयस्विनी भी है, प्रेयसी है तो परिणिता भी है । 'मन' को भटकानेवाली अप्सरा है तो मार्गदर्शन करानेवाली सनातन नारी भी है ।

''सच पूछो तो, प्रजा–सृष्टि में क्या है भाग पुरूष का ?

यह तो नारी ही है, जो सब यज्ञ पूर्ण करती है ।''

'दिनकर' ने 'प्रेम' के शुद्धरूप के माध्यम से 'उर्वशी' के महान रूप को उजागर किया है ।

'श्री अरविन्द' ने इस काव्य के माध्यम से 'प्रेम' के उदात्तीकरण पर ज़ोर दिया है । उन्होंने दोनों प्रेमियों को सामान्य प्रेमी की भाँति चित्रित नहीं किया है, लेकिन इस प्रेम की 'गंगोत्री' से आगे बढ़कर उस ऊचाई की तरफ उन्मुख है जहाँ प्रेम का सर्वोत्कृष्ट और शुद्ध उदात्त रूप विद्यमान है ।

'प्रेम' की छटपटाहट के बीच भी अपनी प्रजा के बीच में लोकप्रिय राजा के रूपमें कार्यभार को वहन करता 'पुरूरवा' चिन्तन की गहरी अवस्था में ही सब कुछ छोड़कर 'प्रेम' की पावनधारा में समाहित होता है ।

'दिनकर' ने इस काव्य के माध्यमसे प्रेम के शुद्धरूप के साथ मनोविज्ञान का सहारा लिया है । प्रेम और संन्यास के समन्वय पर जोर दिया है । कविने राग से वैराग्य नहीं, राग से मैत्री का संकेत दिया है । 'उर्वशी', 'प्रेम' के लिए संघर्ष का निषेध करती है, और सहज , स्वच्छ, प्राकृतिक जीवन जीने की ईच्छा प्रकट करती है ।

'दिनकर' ने देवता से भी मानव की महानता को सर्वोपरी मान कर कहा है –

''देवताओं की नदी में ताप की लहरें न उठती,

किन्तु, नर के रक्त में ज्वालामुखी हुंकारता है ।"

यही रक्त की धारा में 'प्रेम' भी बहता है, जिसे संयत रूप में स्वीकार कर विवेक के साथ मानव सुंदर जीवन के संतुलन को प्राप्त कर सकता है । 'उर्वशी' के पावन प्रेम को प्राप्त करने के बाद 'राजा पुरूरवा' यह घोषणा करता है कि –

"मर्त्य मानव की विजय का तूर्य हूं मैं,

उर्वशी ! अपने समय का सूर्य हूँ मैं ।

अन्धतम के भाल पर पावक जलाता हूँ,

बादलों के सीस पर स्पंदन चलाता हूँ ।"

इस प्रकार मानव अपने इस छोटे से जीवन में ही सूर्य की तरह दैदिप्यमान प्रकाश से भरा जीवन जी सकता है ।

अंत में हम कह सकते हैं कि दोनों ही कवियों ने अपनी काव्यकृति के माध्यम से प्रेम के उत्कट और औदार्य रूप को प्रस्थापित किया है । इसके द्वारा आधुनिक मानव को 'काम' विषयक कुण्ठा से बचाने का कार्य करते हुए, भारतीय संस्कृति द्वारा स्वीकार्य प्रेम के उदात्त रूप की स्थापना की है ।

संदर्भ–ग्रंथ :

१) 'उर्वशी' – 'श्री अरविन्द' – श्री अरविन्द आश्रम ट्रस्ट, पोंडिचेरी–२, अनुवाद – अमृताभारती–२००३

२) 'दि हार्मनी ओफ वरच्यू' – 'श्री अरविन्द' – श्री अरविन्द आश्रम ट्रस्ट, पोंडिचेरी–२,

३) 'उर्वशी' – दिनकर – उदयाचल प्रकाशन – पटना

४) 'उर्वशी' का काव्यात्मक सौकुमार्य निबंध – हजारीप्रसाद द्विवेदी

५) उर्वशी : कला और विचारबोध – निबंध – डॉ. नगेन्द्र

६) महाकवि दिनकर : 'उर्वशी' तथा अन्य कृतियाँ – डॉ. विमलकुमार जैन